Original Article
ISSN (Online): 2582-7472

ShodhKosh: Journal of Visual and Performing Arts
January-June 2023 4(1), 4543–4546

# IDEAL LIFE PHILOSOPHY REVEALED IN 'BRIHATTRAYAH' OF SANSKRIT LITERATURE

# संस्कृत साहित्य के 'बृहत्त्रयः' में प्रकट आदर्श जीवनदर्शन

Maheshkumar G. Patel [1], Pravinkumar Kalubhai Bariya [2]

[1] Assistant Professor, Post Graduate Sanskrit Department, Sardar Patel University, Vallabh Vidyanagar, Anand, Gujarat, India
[2] Research Scholar, Post Graduate Sanskrit Department, Sardar Patel University, Vallabh Vidyanagar, Anand, Gujarat, India

**DOI**
10.29121/shodhkosh.v4.i1.2023.5739

**Funding:** This research received no specific grant from any funding agency in the public, commercial, or not-for-profit sectors.

**Copyright:** © 2023 The Author(s). This work is licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License.

With the license CC-BY, authors retain the copyright, allowing anyone to download, reuse, re-print, modify, distribute, and/or copy their contribution. The work must be properly attributed to its author.

OPEN ACCESS

## ABSTRACT

**English:** The aim of human life is to achieve 'self' and attain unity with the Supreme Being. To live life in such a way that the values of humanity can be understood and satisfied with it, and to take refuge in the Supreme Being in the end after performing one's duties. The world is mainly materialistic. To be free from its bonds and to remain diligent in one's work and to travel in such a way that one can remain absorbed in it, is the success of life. Literature highlights the aspects related to life. And develops the art of living. The seeds of the art of living are found in a refined form in literature. Knowledge of literature arouses the feelings within a person, which awakens the feeling of doing something new in his life and gives self-knowledge.

**Hindi:** मानवजीवन का उद्देश्य 'स्व' को प्राप्त करना तथा परमसत्ता से एकता प्राप्त करना है। जीवन को इस प्रकार जीना कि मानवता के मूल्यों को समझा जा सके तथा उससे संतुष्ट हुआ जा सके, तथा अपने कर्तव्यों का पालन करके अंत में परमसत्ता की शरण में जाना। संसार मुख्यतः भौतिकवादी है। इसके बंधनों से मुक्त होकर अपने कार्य में प्रयत्नशील रहना तथा इस प्रकार भ्रमण करना कि उसमें लीन रहा जा सके, यही जीवन की सफलता है। साहित्य जीवन से संबंधित पहलुओं को उजागर करता है। तथा जीवन जीने की कला का विकास करता है। जीवन जीने की कला के बीज साहित्य में परिष्कृत रूप में पाए जाते हैं। साहित्य का ज्ञान व्यक्ति के भीतर की भावनाओं को उभारता है, जिससे उसके जीवन में कुछ नया करने की भावना जागृत होती है तथा आत्मज्ञान होता है।

**Keywords:** Duty of Human Life, Knowledge of Literature, Human Values, Personal Development, Knowledge of Society and Literature, Ideal Life, Efforts for Success मानव जीवन का कर्तव्य, साहित्य ज्ञान, मानवीय मूल्य, व्यक्तिगत विकास, समाज और साहित्य का ज्ञान, आदर्श जीवन, सफलता के लिए प्रयास

## 1. प्रस्तावना

साहित्यिक दृष्टि से साहित्य का अर्थ कवियों-महाकाव्यों की रचना है। जिसमें समाज, परिवार, व्यक्ति, लोक कल्याण आदि का चित्रण जो जीवन दर्शन को स्पर्श करता है, केन्द्र में होता है तथा ज्ञानवर्धक शैली में उपदेश देता है। साहित्य में उल्लेखों में व्यक्ति अपने जीवन में तीन मुख्य प्रकार के उल्लेख लेकर सफलता के शिखरों को पार कर सकता है: स्वयं लेखक-लेखक-कवि का उल्लेख, कविता के पात्रों का उल्लेख तथा पाठक का उल्लेख। संस्कृत साहित्य में कालिदास जैसे महाकवियों द्वारा रचित महाकाव्य प्रमुख स्थान रखते हैं। इनमें महाकवि कालिदास द्वारा रचित महाकाव्य 'रघुवंश' तथा 'कुमारसंभव', भारवि द्वारा रचित 'किरातार्जुनीयम्', माघ द्वारा रचित 'शिशुपालवध' तथा श्रीहर्ष द्वारा रचित 'नैषधीयचरित' शामिल हैं। इन महाकाव्योंका सम्पूर्ण साहित्य जगत पर गहरा प्रभाव है, जो मानवजीवन को भी ज्ञान प्रदान करता है। इन पांचों महाकाव्यों में से तीन में निहित व्यक्त जीवन दर्शन का चित्र देने का प्रयास किया गया है। साहित्य में चार प्रकार के फल, धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष दर्शाए गए हैं, जो महाकाव्यों की विशिष्ट विशेषता है। कवि अपनी विद्वता से अपनी रचनाओं में शब्दों के माध्यम से चमत्कार लाते हैं और समाज को एक नया मोड़ देते हैं।

## 2. शोध के उद्देश्य

- संस्कृत साहित्य में प्रकट जीवन के आदर्शों का मूल्यांकन करना।
- संस्कृत साहित्य में भारवि, माघ और श्रीहर्ष के महाकाव्यों में निहित आदर्श जीवनदर्शन की अवधारणा स्पष्ट करना।
- साहित्य को मानवजीवन के साथ जोड़ना।
- भारवि, माघ और श्रीहर्ष के महाकाव्यों को लेकर आदर्श जीवनदर्शन वर्तमान समय के साथ जोड़ना।
- प्राचीन साहित्य में वर्णित प्रणालियों को आधुनिक जीवन के साथ जोड़कर बुद्धिमानी से समस्याओं का समाधान करना।

## 3. भारवि, माघ और श्रीहर्ष के महाकाव्यों में आदर्श जीवनदर्शन

महाकाव्यों में रचनाकालक्रम की दृष्टि से यह सर्वप्रथम और आकार की दृष्टि से 'किरातार्जुनीयम्' लघुतम है। इसके निर्माता भारविने अपने काव्य में स्ववृत्तपरिचयात्मक कुछ भी नहीं लिखा है। महाकवि के रूप में प्रसिद्धि का एकमात्र आधार 'किरातार्जुनीयम्' ही है। प्रामाणिक ऐतिहासिक विवरण उनके विषय में अन्यत्र भी अनुपलब्ध है। 634 ई. में उत्कीर्ण "आयोहल" (ऐहोल) शिलालेख के उल्लेख और दंडी की "अवंतिसुंदरीकथा" के संकेत से अनुमान किया जाता है कि "भारवि" परमशैव और दाक्षिणात्य कवि थे। पुलकेशी द्वितीय के अनुज, राजा विष्णुवर्धन के राजसभा पंडित थे और 600 ई. के आसपास विद्यमान थे।

'किरातार्जुनीयम्' के पहले सर्ग में द्रौपदी और दूसरे में भीम द्वारा युधिष्ठिर को दुर्योधन के विरुद्ध युद्ध की घोषणा के लिए उकसाने और युधिष्ठिर द्वारा उसे अनीतिपूर्ण बताकर अस्वीकार कर देने के क्रम में भारवि ने राजनीति के दो छोरों के बीच के द्वंद्व पर बहुत सार्थक विमर्श प्रस्तुत किया है। इसी तरह ग्यारहवें सर्ग में मोक्ष के स्थान पर शक्ति और प्रभुता के लिए किए जा रहे अर्जुन के तप को इन्द्र द्वारा गर्हित बताए जाने पर, अर्जुन के प्रत्युत्तर के रूप में भारवि ने जीवन-व्यवहार में अन्याय के प्रतिकार, लौकिक सफलता, यश और आत्म-सम्मान के महत्व पर जो गम्भीर विचार दिए हैं वे स्वस्थ इहलौकिक जीवन का एक संतुलित आदर्श का चित्र उपस्थित करते हैं।

क्रियासु युक्तैर्नृपचारचक्षुषो न वंचनीयाः प्रभवोऽनुजीविभिः।

अतोऽर्हसि क्षन्तुमसाधु साधु वा हितं मनोहारि च दुर्लभं वचः॥ 1.4॥

स किंसखा साधु न शास्ति योऽधिपं हितान्न यः संशृणुते स किंप्रभुः।

सदाऽनुकूलेषु हि कुर्वते रतिं नृपेष्वमात्येषु च सर्वसंपदः ॥1:5॥

".... किसी कार्य के लिए नियुक्त कर्मचारी द्वारा स्वामी को धोखा नहीं दिया जाना चाहिए। यह जानना ज़रूरी है कि दुनिया में क्या पसंद है और क्या नापसंद। लेकिन, वस्तुतः ऐसी वाणी, जो हितकारी भी हो और मनोहर भी लगे यह सदैव दुर्लभ होता है। वह मंत्री कैसा जो उचित हो किन्तु अप्रिय लगनेवाली सलाह न दे, और वह राजा कैसा जो हितकारी किन्तु कठोर बात न सुन सके। राजा और मंत्री में परस्पर अनुकूलतापूर्ण विश्वास होने पर ही राज्य के प्रति सभी प्रकार की समृद्धियां अनुरक्त होती हैं।"

सहसा विदधीत न क्रियामविवेकः परमापदां पदम्।

वृणुते हि विमृश्यकारिणं गुणलुब्धाः स्वयमेव सम्पदः ॥३०॥ (किरातार्जुनीयम्, द्वितीय सर्ग)

".... किसी कार्य को बिना सोचे-विचारे अनायास नहीं करना चाहिए। विवेकहीनता आपदाओं का परम आश्रय है। गुणों की लोभी संपदाएं अच्छी प्रकार से विचार करने वाले का स्वयमेव ग्रहण करती हैं, अर्थात् उसके पास स्वयं चली आती हैं।"

महाकवि भारवि द्वारा रचित महाकाव्य 'किरातार्जुनीयम्' 18 सर्गों में विभाजित है। इस महाकाव्य में मनुष्य के कर्तव्य और ईश्वर के कर्तव्यों के बीच विरोध और समन्वय को दर्शाया गया है। ईश्वर मनुष्य को अपने प्रयासों से जो कुछ भी बनाता है, उसे प्राप्त कराता है। उसके लिए उसे निरंतर संघर्ष और संघर्षों का सामना करना पड़ता है, जिसे इस महाकाव्य में देखा जा सकता है। युधिष्ठिर और दुर्योधन जुआ खेलते हैं और उनके मामा द्वारा एक षड्यंत्र रचा जाता है। अंत में, युधिष्ठिर न केवल अपनी संपत्ति खो देते हैं, बल्कि राज्य लक्ष्मी के हिस्से के रूप में उन्हें जो राजसी सत्ता मिली थी, वह भी हार जाते हैं। परिणामस्वरूप, वे अपने भाइयों और द्रौपदी के साथ बारह वर्ष के वनवास और एक वर्ष के अज्ञातवास में रहते हैं। यहां हमें जीवनयापन के लिए जुआ खेलने और सत्ता हासिल करने के लिए अपना पूरा जीवन दांव पर लगाने के उदाहरण मिलते हैं, जो स्पष्ट रूप से मनुष्य को पतन की ओर धकेलते हुए देखे जा सकते हैं। साथ ही, खोए हुए राज्य में व्यवस्था के बारे में चिंतित युधिष्ठिर, वणेचर को दुर्योधन के लोगों के साथ व्यवहार के बारे में जानने के लिए भेजते हैं ताकि आगे की रणनीति बनाई जा सके। यहां प्रजा के साथ संबंधों की वास्तविकता देखने को मिलती है। गुप्तचर द्वारा शत्रु के

अवगुणों के सद्गुणों में परिवर्तित हो जाने का विवरण सुनने के बाद वह अपने भाइयों और द्रौपदी को यह बात बताता है। शत्रु की ऐसी सफलता सुनकर संसार की कौन सी स्त्री इस विषय पर उत्तेजक वचन न बोले; कहते हैं तलवार के घाव तो भर सकते हैं पर वाणी के घाव नहीं। ऐसी बातें कहने वाली द्रौपदी राजा युधिष्ठिर के क्रोध को भड़काकर उन पर प्रहार करती है जिससे उन्हें जीवन की वास्तविक स्थिति का बोध होता है। संसार की कौन-सी स्त्री उस समय अपने आप पर नियंत्रण रख सकती है? द्रौपदी युधिष्ठिर को स्थिति से अवगत कराती है। "....हे नाथ ! अगर स्त्रीका उपदेश पुरुषों के लिये अनादर सा होता है इसलिए क्या करूं मेरी आन्तरिक व्यथा मुझे कहने के लिये मजबूर कर रही है अतः आप क्षमा करियेगा। हे महाराज ! भला बताइये तो आपके बिना कौन ऐसा राजा होगा जो कि-अपनी स्त्री के समान राजलक्ष्मी को दूसरे के अधीन कर देगा ? हा ! देखिये ये वही भीम हैं जो पहले सुन्दर पलङ्ग पर सोते थे आज जमीन पर सोते हैं, और जिन्होंने उत्तर कुरु देश का जीतकर बहुत सा स्वर्ण लाकर खजाने में रक्खा था वही अर्जुन आज वल्कल पहने हुए हैं और ये दोनों सुकुमार सुन्दर नकुल तथा सहदेव कठिन भूमि में सोते हैं इन सबों को इन हालतों में देख के भला आप धैर्य और सन्तोष को नहीं छोडते हैं यह बड़े आश्चर्य की बात है, आपकी दुर्दशा देखकर मुझे तो अत्यन्त दुःख हो रहा है।" ".... हे महाराज! आप अब शान्ति को छोड़कर शत्रुओं को नष्ट करने के लिये अपना पुराना तेज धारण करिये, क्योंकि शान्ति से मुनियों का कार्य होता है न कि राजाओं का, यदि आप शान्ति ही को सुख का साधन समझते हैं तो राज-चिह्न धनुषादि को त्यागकर जटा बढ़ाकर केवल मुनियों की भांति अग्निहोत्र किया करें।" इस प्रकार अपने स्वामी को कठिन परिस्थितियों से लड़ने के लिए उत्साह से प्रेरित करने का कार्य द्रौपदी में दिखाई देता है। इसके अलावा, दुश्मनों को हराने के लिए कहती हैं कि ".... हे महाराज! सब प्रकार से समर्थ होते हुए भी शत्रु-विजय के लिये आपका समय की प्रतीक्षा करते रहना उचित नहीं है क्योंकि विजय चाहने वाले राजा लोग समय पड़ने पर किसी न किसी व्याज से सन्धि को भी तोड़ देते हैं।" इसके अलावा अर्जुन के प्रति द्रौपदी वह अर्जुन से यह भी कहती हैं कि "...जबतक तपस्या पूरी न हो तबतक आप हमलोगों के बिना व्यग्र न होना क्योंकि बिना दृढ़ आग्रह के कोई कार्य सिद्ध नहीं होता, और उन्हें तपस्या के लिये उत्तेजित करने के लिये। पुनः कहने लगी कि-संसार में तेजस्वी पुरुषों की मान-हानि प्राण-हानि के तुल्य ही होती है, शत्रु से पराजित रहने पर उनका अपमान होता है और शत्रुओं ने जो जो दुव्यवहार किये हैं और जिन्हें कि मैं स्मरण भी नहीं करना चाहती, आज मुझे वे ही सब तुम्हारे बिना अगर और भी कष्ट पहुंचायेंगें इसलिए उन शास्त्रों का ज्ञान को इस आशा से सहूंगी कि आप शीघ्र ही शत्रुओं को जीतने योग्य सामथ्य प्राप्तकर पुनः मिलेगें । अतः अब आप तपस्या के लिये वहाँ जाओ और आप के समस्त विघ्नों को इन्द्र भगवान् दूर करें, हे नाथ! आप व्यासजी का आदेश पालन करते हुए हमलोगों के मनोरथ को सफल करें। और अब आपको कृतकार्य देखकर पुनः आन्नद से आलिङ्गन करना चाहती हूं।" इस प्रकार महाकवि भारवि के महाकाव्य 'किरातार्जुनीयम्' में राजनीति के संबंध में समाज का चित्र और आदर्श जीवन की प्रतिध्वनियाँ देखने को मिलती हैं।

संस्कृत के कवि प्रशस्तिपरक सुभाषितोक्ति के अनुसार माघ कवि के इस महाकाव्य में कालिदास की उपमा, भारवि का अर्थगौरव और दंडी या श्रीहर्ष का पदलालित्य तीनों एक में समन्वित हैं। महाकवि माघ के महाकाव्य शिशुपालवध में भगवान कृष्ण के प्रति शिशुपाल के वैर की कथा बीस सर्गो में समेटी गई है तथा इसमें आने वाले प्रत्येक पात्र के संवादों में जीवन में उपस्थित नैतिक तत्वों की झलक मिलती है। जिसमें श्रीकृष्ण और नारद के बीच संवाद एक उच्च व्यक्तित्व की झलक देता है। व्यक्ति चाहे कितने भी उच्च स्तर का क्यों न हो, एक साधारण व्यक्ति द्वारा उसे दी गई सलाह में विश्व कल्याण की भावना रखने वाले व्यक्ति का मूल्य समाज में महत्वपूर्ण माना जाता है। इसके अलावा बलराम और उद्धवजी के संवाद में एक दूसरे का विरोध भी देखा जा सकता है। निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए, अपने-अपने विचारों को क्रियान्वित करने के लिए या किसी योजना पर निर्णय लेने के लिए, इस तरह का परस्पर विरोध स्वाभाविक रूप से देखा जा सकता है, जो मानव जीवन की आदर्श कड़ी है। इसके अलावा शिशुपाल में जो अहंकार, दंभ, क्रोध और इस तरह की बातें करना है, उसे देखकर कहा जा सकता है कि उसका जीवन ईर्ष्या और द्वेष से भरा है, दूसरों से खुद को श्रेष्ठ साबित करने से उसका पतन होता है। जिसके कारण समाज में उसकी निंदा होती है। अंत में समय आने पर वह जड़ से नष्ट हो जाता है। इस संबंध में किसी भी प्रकार का अहंकार एक दिन समाज में बुरे परिणाम लाएगा, जिसकी झलक माघ के महाकाव्य शिशुपालवध में मिलती है, जो उस समय के समाज और जीवन के आदर्शों को उजागर करता है।

अलंकृत काव्यरचना शैली की प्रधानतावाले माघोत्तरयुगी कवियों द्वारा निर्मित काव्यों में अलंकरण प्रधानता, प्रौढ़ोक्ति कल्पना से प्रेरित वर्णन प्रंसगों तथा पांडित्यलब्ध ज्ञानगरिष्ठता, अतिसंयोजन आदि की प्रवृत्ति बढ़ी। उस रुचि का पूर्ण उत्कर्ष श्रीहर्ष के 'नैषधीयचरित' या जिसे केवल "नैषध" भी कहते हैं। इस महाकाव्य में देखा जा सकता है की बृहत्त्रयी के इस बृहत्तम महाकाव्य का महाकवि, न्याय, मीमांसा, योगशास्त्र आदि का उद्भट विद्वान् था और तार्किक पद्धति का महान अद्वैत वेदांती भी थे। 'नैषधीयचरित' में शास्त्रीय वैदुष्य और कल्पना की अत्युच्च उड़ान देखने को मिलती हैं।

यहां पाया जाता है की महाकाव्य 'नैषधीयचरितम्' में श्रीहर्ष समाज के प्रति कर्तव्यनिष्ठ व्यक्ति को अपने कर्तव्यों और समस्याओं के अधीन रहने और श्रेष्ठता प्राप्त करने के लिए सही निर्णय लेने को कहते हैं। मानव जीवन में प्रेम ही दोनों चरित्रों को एक करने वाला माध्यम है, इसमें यदि विघ्न आए तो उसे समझना चाहिए और सहनशीलता दिखानी चाहिए और जीवन जीना चाहिए भले ही वियोग में समय क्यों न बिताना पड़े, जो दमयंती के चरित्र में देखने को मिलता है। मानव जीवन में धैर्य का महत्व दर्शाया गया है, नल और दमयंती एक दूसरे से प्रेम करने लगते हैं और दोनों एक दूसरे को पाने की चाहत प्रकट करते हैं। हंस द्वारा नल की प्रियतमा की चाहत और दमयंती के समक्ष नल की वासनापूर्ण स्थिति का वर्णन कर मिलन की आशा, धैर्य का परिचय देते हुए यहां मानव धर्म को केंद्र में रखते हुए मानवीय कर्तव्य का मार्ग अत्यंत कठिन और कदम-कदम पर परीक्षा लेने वाला है। ऐसी स्थिति में यदि व्यक्ति धैर्य खो देता है तो यह साहित्य उसे जीवन में धैर्य धारण कर जीवन व्यतीत करने की शिक्षा देता है। मनुस्मृति में धर्म के दस लक्षण बताए गए हैं.

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः ।

धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम् ।। मनुस्मृतिः - ५/९२,

जिसमें धैर्य को प्रथम स्थान दिया गया है। इसके अलावा नल और दमयंती दोनों के वियोग में मानव जीवन का अकथनीय प्रेम निहित है, आत्मबलिदान की योजना बनाकर व्यक्ति के गुण-दोष को जानकर अपनी इच्छानुसार जीवन व्यतीत किया जा सकता है, जो इस महाकाव्य में देखने को मिलता है। नल के संपूर्ण जीवन को समेट कर मानवीय गुणों को बढ़ाने के साथ ही धर्म, अर्थ और काम के बीच सुंदर संतुलन बनाए रखने का संदेश भी जीवन में उतारा जा सकता है।

इस प्रकार पाँच भारतीय महाकाव्यों में, विशेषकर तीन प्रमुख महाकाव्यों में चेतना का संचार अत्यंत गहनता से हुआ है। मानो अनजाने में ही सही, साहित्यशास्त्र विश्व के समस्त विज्ञानों में सर्वाधिक उन्नत है। क्योंकि मानव जीवन में सरल वातावरण निर्मित करने तथा उचित लक्ष्य की प्राप्ति हेतु महान् प्रयास किए गए हैं। अंततः यह कहा जा सकता है कि भारवि, माघ और श्रीहर्ष के महाकाव्यों में तत्कालीन समाज का चित्र स्पष्ट रूप से प्रस्तुत किया गया है, जिससे मानवीय मूल्यों और मानवीय गुणों का विकास कहा जा सकता है। उस समय लोग बड़े साहस और अपनी क्षमता के अनुसार जीवन पथ पर अग्रसर होते थे। हर कोई सुख प्राप्ति के लिए परिश्रम करता हुआ, हर प्रकार के दुःख में भागीदार होता हुआ दिखाई देता था। घर हो या परिवार, हर कोई अपने-अपने लक्ष्य पूरे करने में लगा रहता था। यहाँ दुश्मन को कैसे परास्त किया जाए, यह भी समझ में आता है।

## संदर्भ ग्रंथसूचि

ए. बी. कीथ, संस्कृत साहित्य का इतिहास, अनु. मंगलदेव शास्त्री, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 1967 (हिंदी)

महाकविभारविविरचितम् किरातार्जुनीयस् [प्रथमः सर्गः], डॉ. वीरेन्द्र कुमार वर्मा, जमुना पाठक सुंदरपुर, वाराणसी । १९७८ ।

माघकृतम् शिशुपालवधम् (संपूर्णम्), પ્રા. નીતીન રતિલાલ દેસાઈ, યુનિવર્સિટી ગ્રંથનિર્માણ બોર્ડ, ગુજરાત રાજ્ય, અમદાવાદ-૬, પ્રથમ આવૃત્તિ : ૨૦૦૧

॥ श्रीः ॥ मनुस्मृतिः सविमर्श 'मणिप्रभा' हिन्दीटीकासहिता, श्रीमान् आचार्य बदरीनाथ वर्मा शिक्षामन्त्री (बिहारराज्य), जयकृष्णदास हरिदास गुप्तः, चौखम्बा-संस्कृत-सीरिज आफिस, पो० बाक्स नं० ८, बनारस.

।। श्रीः ।। हरिदास संस्कृत ग्रन्थमाला, महाकवि श्रीहर्षप्रणीतं नैषधमहाकाव्यम्, पण्डित श्री त्रिभुवनप्रसाद उपाध्याय, चौखम्बा अमरभारती प्रकाशन, वाराणसी-२२१००१, सप्तम् संस्करण सन् १६८३ ई.